International Journal of Creative Research and Innovation (IJCRI) Vol-4, Issue-3, 2019 | ISSN: 2581-6829, http://www.edusanchar.com

माखनलाल चतुर्वेदी और बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की आदर्शवादी विचारधारा

डॉ० सपना बंसल

Research Scholar, Department of Hindi, Himachal Pradesh University, Summer Hill Shimla – 171005

भूमिका

साहित्यकार अपने युग का प्रतिनिधि होता है। अपने युग का प्रतिनिधि होने के नाते उसका कर्त्तव्य हो जाता है कि अपने साहित्य द्वारा लोगों को आदर्श भावनाओं की ओर प्रेरित करे। साहित्य में इस तरह की कल्याणपरक भावना साहित्य की एक व्युत्पत्तिपरक परिभाषा में ही छिपी है जिसके अनुसार जनहित की कामना करने वाली रचना साहित्य नाम से अभिहित की जाती है। संस्कृत में इसी बात को इस प्रकार कहा गया है, "सहितस्य भाव: साहित्यम्।" 'सहित' के दो अर्थ होते हैं–एक के अनुसार जो हितकारी हो, दूसरे के अनुसार जो एक साथ हो। साहित्य का माध्यम भाषा होती है और भाषा मानव जाति को आपस में आबद्ध कर उसमें सहकारिता का भाव उत्पन्न करती है। इसलिए भाषा के माध्यम से व्यक्त होने वाला साहित्य भी पारस्परिक सहयोग के भाव को और अधिक बढ़ाने वाला होता है। साहित्य की इस परिभाषा की कसौटी साहित्य में सत्य, शिव और सुन्दर इन तीनों का समावेश हो जाता है। इन तीनों तत्त्वों के सन्तुलित समन्वय से साहित्य सुन्दर आकर्षक एवं परोपकारी भावों से ओतप्रोत हो जाता है। इन तीनों में से साहित्य का शिव रूप आदर्श भावनाओं से अनुप्राणित होता है। साहित्य में इसीलिए आदर्शवाद का अस्तित्त्व बहुत प्राचीन है।

आदर्शवादी विचारधारा- साहित्य में जिस आदर्श को महत्त्व दिया जाता है वह मानव जीवन के आन्तरिक पक्ष पर जोर देता है। आदर्शवादी साहित्यकार भी मानव के भौतिक जीवन की अपेक्षा उसके आन्तरिक जीवन के उत्तरोत्तर विकास तथा परिमार्जन को ही अपना लक्ष्य मानकर चलता है। यह मानव-जीवन की उच्च संभावनाओं पर विचार करता है जिसके मूल्य शुद्ध और सर्जनात्मक होते हैं। आदर्शवादी साहित्य, भाव और कला की ऊँचाई में विश्वास करता है, फलत: इसके अन्तर्गत रहस्यवाद और अध्यात्म की भी व्यंजना होती है। इसमें उपदेशात्मकता होती है तथा शाश्वत मानव-मूल्यों को ग्रहण किया जाता है। माखनलाल पर एक साहित्यकार के रूप में विचार करते हुए दिनकर ने उन्हें छायावादी-रहस्यवादी कवि के रूप में देखा है जिसमें देशभक्ति की भावना है प्रखर राजनीतिक चेतना है, गहरी आध्यात्मिक भावना है। अन्तर सिर्फ इतना है कि माखनलाल का आदर्शवाद यथार्थोन्मुख आदर्शवाद है, मात्र सपनों और कल्पनाओं पर आधारित नहीं। छायावाद युग की अनेक विशेषताओं को अपने काव्य में समाविष्ट करने वाले माखनलाल इस बात में दिनकर से भिन्न थे कि उनका आदर्शवाद यथार्थ पर आधारित था। "उनका यह यर्थार्थोन्मुख आदर्शवाद ही उनको हिन्दी के अन्य सभी कवियों से भिन्न कर देता है।" साहित्यकार एवं अपने युग के प्रतिनिधि होने के नाते 'एक भारतीय आत्मा' माखनलाल चतुर्वेदी ने आत्मबल तथा आत्मविश्वास का आदर्श स्थापित करने का प्रयास किया है। वे 'निश्चिन्त' नामक अपनी कविता में कहते हैं,-

"दो आज्ञा, आदर से पालू, तंग जगह मे कर दो बन्द
दु:ख और एकान्त-चिन्तना दोनों का लूटूँ आनन्द।"

इन पंक्तियों द्वारा कवि माखनलाल ने अपने मन के विषाद को विश्वास एवं आत्मविश्वास में बदलने का प्रयास किया है। जिसके सहारे वह बेड़ियों-हथकड़ियों का बोझ एवं एकान्त की यन्त्रणाओं को भी सहने की शक्ति संचित करते हुए बोल उठते हैं,

"आत्मदेव। प्यारी हथकड़ियाँ, और बेड़ियाँ दे परितोष
उतनी ही आदरणीय है, जितना वह जय-जय का घोष।"

आदर्शवादी साहित्यकार मानव समाज के कल्याण की कामना करते हुए उसके आन्तरिक जीवन के विकास को अपना लक्ष्य मानकर अतीत का गौरव गान करता है। जिस प्रकार इस देश के शिवाजी और राणा प्रताप मराठा तथा राजपूतों के त्याग और बलिदान के गौरवशाली इतिहास ने कवि माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में राष्ट्रीय चेतना का जोश और आवेग भर दिया है, स्वतंत्रता संग्राम के दौरान उन्हें भी राजपूताने का जोश भरा इतिहास याद आता है, और वे स्फूर्तिला गीत गा उठते हैं–

"माना जौहर भी होता था, मरने के त्यौहारों वाला

और पतन के अगर सिन्धु से, तरने के त्यौहारों वाला।"

कवि माखनलाल चतुर्वेदी स्वतन्त्रता आन्दोलन के इस संघर्षपूर्ण दौर में राजपूताने के इतिहास के माध्यम से मानव समाज में जोश भरना चाहते हैं। चतुर्वेदी में देश शक्ति की भावना है, प्रखर राजनैतिक चेतना है। "लोकमान्य तिलक की राष्ट्रीयता का मूल प्रेरक तत्त्व भारतीय साँस्कृतिक आदर्श एवं उसकी पुरातन नीति थी।" तिलक के शिष्य और अपने राजनीतिक साहित्यिक गुरु पं० माधवराव सप्रेजी के प्रभाव के कारण कवि माखनलाल की स्मृति में जिस तरह शिवाजी और रामदास के सन्दर्भ काव्यगत राष्ट्रीय चेतना का रूप ग्रहण करते हैं, उसी तरह कुरुक्षेत्र तथा हल्दी घाटी के भारतीय युद्धों से भरे गौरवशाली इतिहास भी उन्हें याद आता है–

"क्या तुमको है कुरुक्षेत्र, हलदी घाटी की याद।

सिर पर प्रलय, नेत्र में मस्ती, *मुट्ठी में मनचाही।"*

माखनलाल चतुर्वेदी अपने काव्य में वीरता के सन्दर्भ में कायरता और क्रूरता को निन्दनीय मानते हैं। कविता की निम्न पंक्तिओं में इसी आदर्श की स्थापना की गई है, यथा–

"जो कष्टों से घबराऊँ तो, मुझमें कयर में भेद कहाँ,

बदले में रक्त बहाऊँ तो, मुझ में 'कायर' में भेद कहाँ"

अर्थात् कवि मानव-समाज में, राजनैतिक चेतना, समर्पण, अतीत के गौरवगान के माध्यम से साहित्य प्राचीन समय से ही आदर्शपरक मूल्यों पर आधृत रहा है। माखनलाल चततुर्वेदी का आदर्शवाद यथार्थोन्मुख आदर्शवाद है।

चतुर्वेदी साहित्यिक वादों के पक्षधर नहीं रहे हैं। उन्हें अनुपयुक्त मान कर मौसम मे उग जाने वाला साहित्य कहा गया। उसे काल के थपेड़ों से बचाया नहीं जा सकता। इसी और संकेत करते हुए चतुर्वेदी कहते हैं, "मौसम में उत्पन्न होनेवाले वृक्षों, फूलों और जीवनधाारियों की तरह मौसम में उत्पन्न होने वाली कला त्रिकालबाधित या अमर नहीं होती; वह क्षणजीवी होती है। मौसम बदला नहीं, कि वस्तु मरी नहीं।" और वे आगे कहते हैं, "कला कभी बहुत ऊँची हो जाती है, वहाँ वह वृक्षों की छुगनियों से पिरामिडों और वहाँ से पक्षियों और वायुयानों से बातें करती हुई नक्षत्रों तक पहुँचती है। कहीं कला बहुत गतिमान, दौड़नेवाली होती है; वह अपने प्रकटीकरण के विस्तार में, नदियों और पहाड़ों को लाँघकर पहुँचती हुई बड़े-बड़े समुद्रों को लाँघकर समझ सकने, या समझ रखने के अन्तिम कोण तक पहुँचती है। कहीं कला अत्यन्त गहरी होती है-वह मणिधरों की तरह, गहरी-से-गहरी अँधेरी गम्भीरता में उतरकर अपनी पहुँच का प्रकाश, जमीन पर डोलते हुए मानव के पास तक पहुँचाती है। कहीं कला, कोमल भाव व रंगों के जल की गहराई में उतरते-उतरते कठोर रत्नों को खोजने में सफल होती है, जो रत्न युग के घनों से नहीं तोड़े जा सकते। किन्तु इस ऊँचाई, गति, इस गाम्भीर्य और इस गहराई के अत्यन्ताभाव में भी प्राणावान कला का निवास है।" काव्य या साहित्य में आदर्शवाद एक ऐसा तत्त्व है जो साहित्य को मानव से जोड़ता है और साहित्य को समाजोपयोगी बनाता है। नवीन भी राष्ट्रीयता वादी कवि होने के नाते आदर्शवादी तत्त्व को साहित्य के लिए उपयोगी मानते हैं। आदर्शवादी काव्य मानव एवं समाज का समन्वय करता है और नैतिक उन्नति में सहयोग करता है। नवीन मानवीय गुणों को साहित्य में सर्वोपरि मानते हैं। उन्हीं के शब्दों में, "मानवीय तत्त्व, मानव को आदर्श मानव में परिणत कर सकते हैं और इन्हें ही हम साधन मानकर 'स्व' तथा 'पर' का हित कर सकते हैं।" नवीन आदर्शवाद में सत्य को साहित्योपयोगी स्वीकार करते हैं। उन्होंने ने अपने काव्य

लेखन में इसी आदर्शवादी विचारधारा को अपनाते हुए पुराणों एवं अन्य प्राचीन धार्मिक ग्रन्थों से चरित्रों को उठाया है और उनके चारित्रिक गुणों के व्याख्यान के द्वारा अपने समय के समाज व मानव के उन गुणों को अपनाने एवं आदर्शवादी बनने के लिए प्रेरित किया है। नवीन जिस समय साहित्य रचना कर रहे थे, उस समय समाज में अनेक प्रकार के आन्दोलन चल रहे थे और मानव में अनेक प्रकार की कुण्ठाएं, ईर्ष्या, द्वैष जैसी प्रवृत्तियाँ घर कर रही थीं। यही कारण है कि कवि ने समाज की इन सभी कुप्रवृत्तियों को उजागर किया और अपने आदर्श चरित्रों द्वारा समाज को एक नई दिशा प्रदान की। लक्ष्मी नारायण का मानना है कि, "श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' को आदर्शवादी विचारधारा के द्धितीय पक्ष, राष्ट्रीय साँस्कृतिक कविता श्रेणी में रखा जाता है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने जहाँ उन्हें 'वीररस के स्वदेश प्रेमी कवि' कहा है, वहाँ डॉ० नगेन्द्र ने भी उन्हें राष्ट्रीय साँस्कृतिक काव्यधारा का ही कवि माना है।" साहित्य आदर्श को मनुष्य के निकट लाता है और मनुष्य इन्हीं गुणों के कारण अपने चरित्र को दूसरे के गुणों से परखता हुआ नैतिक बनाता है, नवीन सही के पक्ष में रहे हैं। उनका मानना है कि, "जो सत्य है वही साहित्य में उपयोगी है और यही सत्य साहित्य को चिरकाल तक चलायमान रखता है। उनके शब्दों में, काव्य में, सत्य, शिव और सुन्दर की परस्पर अन्तर्व्याप्ति को कवि कृति का आदर्श माना है।" नवीन ने अपने साहित्यिक आदर्श को स्पष्ट करते हुए कहा है, "असत् एवं असुन्दर के प्रति विराग तथा सत् एवं सुन्दर के प्रति अनुराग उत्पन्न करना एवं जीवन में जो कुछ अनमिल है, उसका लोप करके उसमें समता एवं सामजस्य को स्थापित करना कलाकार का काम है।" नवीन ने इन सभी गुणों को समाज एवं साहित्य में सम्मिलित किया है और इनका सामजस्य दिखाकर साहित्य के द्वारा समाज को अन्धेरे से उजाले की तरफ बढ़ने की प्रेरणा दी है। इसी तथ्य की प्रस्तुति उन्होंने निम्न काव्य पंक्तियों में यों दी है, यथा–

"बिना सत्य–शिव के रहत सुन्दर सदा अपूर्ण
त्यों सुन्दर बिन सत्य, शिव, किमि हैं है सम्पूर्ण।"

इस प्रकार नवीन ने पौराणिक एवं ऐतिहासिक पात्रों को अपने काव्य में रखा है। और उनके गुणों को व्याख्यायित करने के साथ-ही-साथ नैतिकता से भटकते मानव को इन चरित्रों से प्रेरणा लेने और समाज उपयोगी कार्य करने की तरफ बढ़ाया है।

नवीन ने साहित्यिक वादों की रचना करने वालों के साथ सहानुभूति प्रकट की है। 'मेरे क्या सजल गीत' काव्य संकलन की भूमिका में, लिखते हुए नवीन ने अति व्यंग्य स्वर में कहा है कि आधुनिक हिन्दी साहित्य ने साहित्यिक चिंतन के अनेक वाद बनाए हैं लेकिन मेरी कविताओं में शायद ये वाद न मिलें, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। उन्होंने कहा है, "उपयोगिता, उपादेयता, प्रगतिशीलता, अपलायनवादिता, सामन्ती विचारधारावरोधक विद्रोहवादिता, औद्योगिक पूँजीवाद-जन्य संघर्षोत्तेजक झण्डोत्तोलन, ले लो, खड्गपटक दो म्यान-मय क्रांति-आवाहन, द्रन्द्रम्यमाना-दिग्-दिडनाद-प्रेरणा, दुर्दान्ताक्रान्तक-जम्भ तोत्पाटन-संदेश-वहनशीलता आदिसत् काव्य-संलक्षण मेरे इन गीतों में कठिनता से मिलेंगे। और फिर, मैं यह भी नहीं जान पाया हूँ कि मैं कौन-वादी हूँ। हमारे सौभाग्य से हमारे आलोचना-शास्त्र ने बड़ी उन्नति की है। परिश्रमी, अध्यवसायी विद्वान् विचारकों ने वर्तमान हिन्दी-साहित्य में अनेकानेक वादों के दर्शन हमें कराए हैं। उन महानुभावों की आलोचना-तत्त्व दीपिकाओं के प्रकाश में हम देख सके हैं कि हमारे काव्य साहित्य में छायावाद है, मायावाद है, फ्रायडीय जायवाद है, रोमांचवाद है, पलायनवाद है"

अपने रचना-कर्म को इन वादों के न आ पाने की असमर्थता बताते हुए वे आगे कहते हैं, "इन सब वादों की चलनी में मेरे गीत साफ छन जायेंगे। यह मैं जानता हूँ। और आलोचक बन्धु इन गीतों में यदि कोई तत्त्व की बात न पायें तो मुझे आश्चर्य न होगा। मुझे स्वयं ये गीत कुछ यों ही-से लगते हैं। कदाचित् एक बार मैंने कहा था कि तुलसी बाबा की 'निज कवित केहि लाग न नीका' वाली उक्ति मुझ पर घटित नहीं होती। इसलिए यदि साहित्य-समीक्षक बन्धुओं को इन गीतों में कोई तत्त्व की बात न दिखाई दे तो मुझे उनसे अनख मानने का कोई कारण प्रतीत नहीं होगा।"

नवीन का मानना है कि साहित्यिक शब्दों में किन्हीं सुखवाद, कल्याणवाद, यौनवाद या किसी अन्य वाद के पक्षधर बनकर चलना ठीक नहीं। "मेरी सैद्धान्तिक मान्यता इस प्रकार की होने के कारण मैं कला-साहित्य समीक्षा के उस मानदण्ड को भ्रामक मानता हूँ जो प्रत्येक साहित्यिक कृति अथवा कला-कृति को सामाजिक परिस्थिति के ऊपर आत्यन्तिक रूप से आधारित कर देता है।" नवीन ऐसे चिंतकों को हिदायत देते हुए आगे कहते हैं, "मैं उनके अध्यवसाय, परिश्रम, अध्ययन और विशिष्ट सिद्धान्त-प्रेम का आदर करता हूँ। पर, मैं यह निवेदन अवश्य करना चाहता हूँ कि वे अपने मस्तिष्क को अचलायतन न बना लें। विचारों को मुक्त वातावरण में पलने दें और अपने को निगड-बद्ध न कर दें। यह बात हमें समझ लेनी है कि मानव मानव है-वह केवल सामन्तवाद, पूँजीवाद, वर्गवाद, भौतिकवाद आदि का मुरब्बा-मात्र नहीं है। जिस वैज्ञानिक भौतिकवाद को वे बन्धु ध्रुव सत्य माने बैठे हैं उसकी ऐतिहासिक रूपरेखा को सँवारने वाला उन्नीसवीं शती का वह भौतिक विज्ञान है जिसका स्वरूप आज नितान्त रूप से परिवर्तित हो गया है। जब स्वयं भौतिक विज्ञान में अनैश्चित्यवाद समाविष्ट हो गया है तब समाजशास्त्र, राजनीति शास्त्र, अर्थनीति शास्त्र, साहित्यालोन शास्त्र एवं कला-निर्णय शास्त्र में जड़तापूर्ण इति-नैश्चित्यवाद का पल्ला पकड़कर चलना साहस का काम भले ही हो, बुद्धि-संगत नहीं हो सकता।"

नवीन ने माना है कि मनुष्य के अध्ययन के अनेक शास्त्र और अनुशासन हैं। लेकिन कोई एक ही अंतिम है ऐसा नहीं। मनुष्य पंचतत्त्व का पुंज है। ऐसा नहीं; इसके अलावा और कुछ भी है ही नहीं। वे कहते हैं, "निःसन्देह भिन्न-भिन्न परिस्थितियाँ-सामन्तशाही, पूँजीवादी, वर्ग संघर्षकालीन या समाजवादी परिस्थितियाँ-मानव के कर्मों, उसकी अभिव्यक्तियों और उसकी प्रेरणाओं पर भिन्न-भिन्न रूप की प्रतिक्रियाएँ करती हैं। पर, इन्हीं का समूचा मानव मान बैठना ठीक नहीं। निश्चय ही मानव रोटी है, अन्न वै प्राणाः, पर वह रोटी ही है, ऐसा मानना असत्य और अतार्किक है। मानव में परिस्थितियों के विपरीत भी कर्म करने का सामर्थ्य विद्यमान है। वह केवल भूत-संघ नहीं है-न च भूतसंघः। वह और कुछ भी है-चाहे न मानिये आप कि वह निष्कल ब्रह्म है-यदि इतनी बात मान ली

जाय कि वह और कुछ भी है, तो उसकी साहित्य-कृति के ये पदार्थवादी मानदण्ड असत्य, अयथार्थ एवं भ्रामक दिखाई देंगे।"

'साहित्य वेदी' निबंध में चतुर्वेदी ने रचनाकारों को साहित्य की वेदी पर सभी-कालुष्य को न्यौछावर करने की सलाह दी है। उन्होंने वही कुछ निवेदित किया हे जो नवीन और दिनकर ने भी कहा है, लेकिन कहने के तरीके भिन्न और अलग तरह के हैं। रचनाकारों के दायित्व और उनके समर्पण को उन्हीं के शब्दों में सम्बोधन सुनिये, "मैं उसे मूल्यवान् समझता हूँ, किन्तु उसका मूल्य चाँदी-सोने के टुकड़े नहीं है। वह मूल्यवान् होकर भी खरीदने, बेचने और उपहार में देने की वस्तु नहीं है। उसे पानेवाले के शरीर पर, 'फटे-पुरानेपन' का राज्य, पथ में विरोध, ग़रीबी, घृणा, क़ानून और लक्ष्मी के गुलामों की कृपा के तीखे काँटे, पदों में पुण्य की ओर न बढ़ने वाले बन्धन, शिर पर मिट जाने की कल्पना, कण्ठ में तौक़ और तिसपर भी माता की पूजा के भावों से मस्त मीठा स्वर, आँखों में श्रम की क्षीणता और तुम्हारे चरणों के धोने के लिए आँसुओं की धारा, गालों पर ईसा के आज्ञा-पालन की तैयारी, मुँह में मौन भाषा की मनोहर स्तोत्र माला, हृदय में देश की दसों दिशाओं में गूँज मचाने-वाली वीणा तथा दुर्बल को सबलता का स्वरूप बना डालनेवाली पुस्तक लिये हुए तुम, और हाथों में, अपनी श्यामता से श्याम के मन को भी मोह लेनेवाली लेखनी,-वह लेखनी, जिसके चल पड़ने पर मरे हुओं में जीवन-ज्योति जगमगाने लगे, बिछड़े हुए मिलने को टूट पड़ें, सोते हुए जाग्रति का सन्देश पहुँचाने लगें और पिछड़े हुए अग्रगामियों को पथ में पीछे छोड़ बैठने की ठानते दीखें।" वे आगे लिखते हैं, "ऐसे अक्षरों के उपासक, शब्दों के साधु, पदों के पूजक, व्यंजनों के विजयानंद विहारी, सन्धियों के निर्माता, और 'पूतना मारणा लब्ध-कीर्ति' के अंग में नित-नव आभूषणों को समर्पित करने वाले; किन्तु प्राणों को, मतवाले हो क़लम के घाट उतारने वाले को ही अधिकार है कि वह आगे बढ़े और तुम्हारी अमृत-सन्तानों की आज्ञा को शिर पर धर कर तुम्हारा पवित्र सन्देश सुनाने, तुम्हारा दिव्य दर्शन कराने और तुम्हारे लिए की हुई आजन्म तपस्या का प्रत्यक्ष परिचय देने के लिए आगे बढ़े।"

आखिर में उन्होंने समर्पित होकर अन्तर्मन से कहा कि, "तब से मस्तक उठाने, मस्तक रखने और मस्तक और हृदय की बलि चढ़ानेवाले लोग अपने आत्मदान से तुम्हारी इस वेदी को हरा-हरा किये हुए हैं। और वेदी के ये उपासक, अमर हैं, अविजित हैं, सदैव आराधनामय हैं; इन्हीं को पाकर निहाल है, तुम्हारी वेदी।"

सारांश

भारतीय मनीषियों के निष्काम काम के द्वारा उच्च मानवीय जीवन की स्थापना करना तथा उसके अनुकूल आचरण करना उनका ध्येय भी है और आदर्श भी। "आदर्शवाद साहित्य अल्पायु होता है। विफलताओं को कबूल कर लेने से मनुष्य की शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं और संघर्ष की उपादेयता में से उसका विश्वास लुप्त हो जाता है। लेकिन जिसके पास आदर्श है वह किसी प्रकार की विफलता को स्वीकार नहीं कर सकता। आखिर में उन्होंने समर्पित होकर अन्तर्मन से कहा कि, "तब से मस्तक उठाने, मस्तक रखने और मस्तक और हृदय की बलि चढ़ानेवाले लोग अपने आत्मदान से तुम्हारी इस वेदी को हरा-हरा किये हुए हैं। और वेदी के ये उपासक, अमर हैं, अविजित हैं, सदैव आराधनामय हैं; इन्हीं को पाकर निहाल है, तुम्हारी वेदी।"

सन्दर्भ – सूची

1 प्रभा: संचा, कालूराम गंगराडे, खण्डवा, 1 अप्रैल 1923, पृ० 271
2 हिमकिरोटिनी, माखनलाल चतुर्वेदी, पृ० 93
3 माता, माखनलाल चतुर्वेदी, पृ० 56
4 भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की हिन्दी साहित्य में अभिव्यक्ति : सुषमा नारायण, पृ० 63
5 हिमकिरीटिनी, माखनलाल चतुर्वेदी, पृ० 50
6 माता, माखनलाल चतुर्वेदी, पृ० 56

7 साहित्य – देवता, पृ० 75
8 साहित्य – देवता, पृ० 75
9 बाल कृष्ण शर्मा 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य : लक्ष्मी नारायण दुबे : पृ० 290 से उदधृत
10 बाल कृष्ण शर्मा 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य : लक्ष्मी नारायण दुबे : पृ० 290 से उदधृत
11 आधुनिक हिन्दी कवियों के काव्य सिद्धान्त : सुरेश चन्द्र गुप्त, पृ० 307
12 कुंकम, नवीन, पृ० 10
13 ऊर्मिला, (पंचमसर्ग), नवीन, पृ० 45
14 बालकृष्ण शर्मा नवीन काव्य – रचनावली, नरेश चन्द्र चतुर्वेदी, पृ० 139
15 बालकृष्ण शर्मा नवीन काव्य – रचनावली : नरेश चन्द्र चतुर्वेदी, पृ० 139, 140
16 वही, पृ० 140
17 बालकृष्ण शर्मा नवीन काव्य – रचनावली, भाग एक : नरेश चन्द्र चतुर्वेदी, पृ० 141, 142
18 बाल कृष्ण शर्मा नवीन काव्य – रचनावली, भाग एक : नरेश चन्द्र चतुर्वेदी, पृ० 142, 143
19 साहित्य – देवता, पृ० 50
20 वही, पृ० 49, 50
21 साहित्य – देवता, पृ० 51